बच्चों के लिए लिखना बच्चों का खेल नहीं

स्वयं प्रकाश

इस बार बाल साहित्य समीक्षा में वत्सल प्रकाशन, बीकानेर से प्रकाशित तीन पुस्तकों- 'बच्चो ! इनसे सीखो हरदम', लेखक - सचिदानन्द सिन्हा, 'जीवी और जीतू' एवं 'गोठ', लेखक - हकु शाह की पुस्तकों की समीक्षा प्रकाशित कर रहे हैं।

बच्चो! इनसे सीखो हरदम

'बच्चो! इनसे सीखो हरदम' सच्चिदानन्द सिन्हा द्वारा लिखी बच्चों की पुस्तक है। जिसमें अट्ठाइस पक्षियों के सुन्दर चित्र और उनमें से हर एक पर लिखी एक-एक छोटी कविता है। इनमें से अनेक पक्षी जैसे-गौरेया, कबूतर, मोर, चील, मुर्गा, बगुला, कौआ, तोता आदि को हम अक्सर देखते हैं, देखते ही पहचान लेते हैं और उनके बारे में थोड़ा-बहुत जानते भी हैं, लेकिन कुछ पक्षी ऐसे भी हैं जिनका हमने केवल नाम सुना है। हो सकता है कुछ बच्चों ने इनका नाम भी न सुना हो। ये पक्षी हैं चातक, पपीहा, महोख, सतभइया, महलाठ, हुदहुद, खंजन, भुजंग आदि। इन पक्षियों को देख पाना अब सिर्फ चिड़ियाघर में या टेलीवीजन के परदे पर ही हो पाता है। कम से कम यह पुस्तक इतना तो करती है कि इन पक्षियों के रूप-रंग और थोड़ा बहुत इनके व्यवहार से भी बच्चों को परिचित करा देती है।

दिक्कत यहां से शुरू होती है कि पक्षी से 'हरदम' क्या सीखा जाए ? कुछ पक्षियों के बारे में तो हमें पता है कि उनसे क्या सीखने को कहा जाता है। मसलन बगुले से ध्यान लगाना, गिद्ध से अपने लक्ष्य पर तीखी नजर रखना, कोयल से मीठा बोलना आदि। लेकिन हुदहुद, महोख, नीलकंठ और खंजन से क्या सीखा जाए ? लगता है इस बारे में लेखक भी स्पष्ट नहीं है और उसने खींचतान कर हर पक्षी से कुछ न कुछ सीख निकालने की कोशिश की है। खंजन चूंकि गर्मियां आते ही पहाड़ों पर चले जाते हैं इसलिए सीख यह मिली कि -

'कुछ दिन का मेहमान इसी से बढ़ती है मर्यादा,
घटता है सम्मान निकटता हो जाने से ज्यादा।'

लेकिन कबूतर हमेशा साथ रहते हैं तो-

'लेना सीख कबूतर से बच्चो तुम मित्र बनाना।'

या मोर से यह शिक्षा मिलती है -

'मस्त बना देता मोरों को घोर घटा का आना,
इनसे हरदम सीखो बच्चो आफत में मुस्काना।'

और पंडुक से यह शिक्षा मिलती है-

'विजयी वही हुआ करता है छल-बल जिसके पास।'

ये किस प्रकार की सीखें हैं ? लेखक परिचय में बताया गया है कि वह छात्र

लेखक परिचय :

हिन्दी के जाने-माने कहानीकार। संप्रतिः सेवानिवृत्ति के बाद पूर्णतः लेखन के लिए समर्पित।

सम्पर्क :

3/33, ग्रीन सिटी, ई-8, अरेरा कॉलोनी, भोपाल-39

जीवन से ही समाजवादी गतिविधियों से जुड़े रहे हैं और उन्होंने समाज चिन्तन पर हिन्दी और अंग्रेजी में कई पुस्तकें लिखी हैं। तो क्या ये समाजवादी सीखें हैं ? क्या लेखक को समाजवादी जीवन मूल्यों की ठीक पहचान है ?

लेकिन बच्चों के संदर्भ में इससे भी जरूरी सवाल यह है कि सीख क्यों जरूरी है ? हर पक्षी को देखकर कोई बात सीखी ही जाए यह जिद क्यों ? क्या अपनी दुनिया के खूबसूरत, बहुरंगी और गुलजार होने का बोध ही एक बहुत बड़ी सीख नहीं ? जो बच्चा दुनिया से प्यार करने लगेगा वह इसकी खूबसूरती को बचाने में अपना जीवन लगा देगा। और आपको क्या चाहिए ? पक्षियों को निमित्त बनाकर बच्चों को 'शिक्षा' देने की कोशिश आधी सदी पहले की जाती थी - 'फूलों से नित हंसना सीखो, कलियों से मुस्काना!' अब तो ऐसे प्रयत्नों की निस्सारता समझ में आ जानी चाहिए।

दो बातें और। 'फूलसूंघा' की अन्तिम पंक्तियां हैं -

'फूलों के संग रहने भर से फूलसूंघा है नाम,
कर्म बिना इज्जत मिलना है संगति का परिणाम।'

अज्ञेय की काव्यपंक्ति है- 'फूलसुंघनी की आतुर फुरकन'! इस छोटी-सी चमकदार चिड़िया को हम इसी रूप में जानते हैं। लेखक ने न जाने क्यों इसे पुल्लिंग बना दिया। ऐसा ही उन्होंने चील के साथ भी किया है।

दूसरी बात। 'बगुला' की दूसरी पंक्ति है-

'छोटी मछली से होता है इसका भारी बैर।'

क्या सचमुच ? क्या बगुला मछली को इसलिए खाता है कि वह उसकी दुश्मन होती है ? या इसलिए कि वह उसका प्राकृतिक भोजन है ? क्या हम दाल-भात इसलिए खाते हैं कि वे हमारे दुश्मन हैं ?

लेकिन रामकृष्ण अडिग के छायाचित्र बहुत अच्छे हैं। और यह भी अच्छी बात है कि हर पृष्ठ पर पक्षियों के जीवशास्त्रीय नाम और प्राप्तिस्थल बता दिए गए हैं।

अट्ठाइस पृष्ठ की इस पुस्तक का मूल्य 'पचास रुपया मात्र' है जो इसे सैकड़ों उत्सुक बच्चों की पहुंच से दूर कर देगा।

जीवी और जीतू

'जीवी और जीतू' चित्रकार हकु शाह द्वारा लिखित एक कहानी की किताब है। कहानी में एक दरबार का (पता नहीं किसका) वर्णन है। दरबार में एक तरफ संसार के सभी राजा-महाराजा, उनके पण्डित व आम लोग (?) बैठे हैं और दूसरी तरफ धरती, जीव-जंतु और पेड़-पौधे। सभा में प्रस्ताव रखा जाता है कि मनुष्यों तथा पशु-पक्षियों और पेड़-पौधों के बीच एक दीवार खड़ी कर दी जाए ताकि दोनों के बीच कोई झगड़ा न हो, दोनों एक-दूसरे को देख भी न सकें और अपनी-अपनी दुनिया में रहें।

अगर यह कल्पना है तो एक निहायत ही बेतुकी कल्पना है। दुष्ट से दुष्ट आदमी भी अपने लिए एक पशु-पक्षी-पेड़-पौधे रहित दुनिया नहीं चाहता-वह अधिक से अधिक उन पर अपना आधिपत्य चाहता है और अपने स्वार्थ के लिए उनका अधिक से अधिक उपयोग करना चाहता है।

चूंकि कहानी में राजा 'रोबोट' (रोबो) जैसी वेशभूषा में आता है इसलिए माना जा सकता है कि यह सुदूर भविष्य की कल्पना है। लेकिन इसके इसके तर्क तो एकदम वर्तमान के हैं। मसलन-'गायें मोटरों-स्कूटरों के बीच घूमती रहती हैं।' या 'कौआ, कोयल और मोर जब हम गहरी नींद में सो रहे होते हैं तो बहुत शोर मचाते हैं।' और एक तर्क तो भयानक है। यह कुत्तों के बारे में है-'इन्होंने तो सारे गांव को परेशान कर रखा है। रात का काम दिन में करते हैं और दिन का काम रात में करते हैं।' पता नहीं लेखक बच्चों की सोच को किस दिशा में प्रवृत्त करना चाहता है! लेखक का आशय जो भी रहा हो, इस तरह के अशोभनीय वाक्य बच्चों की किताबों में नहीं होने चाहिएं।

गधे के बारे में तर्क है कि 'इनमें तो बिल्कुल ही अक्ल नहीं है' और 'गधीबेन' तो 'उछलती-कूदती, आंकी-बांकी कैसी भी चलती है' और 'पुलिस को तो हैरान-परेशान कर देती है।' ध्यान रहे, ये बातें राजा के 'पण्डित' कह रहे हैं। एक पण्डित तो यह पाण्डित्यपूर्ण सूचना भी देता है कि 'विकसित देशों ने तो छोटे-छोटे कीड़ों-मकोड़ों को समाप्त कर दिया है।'

जवाब में पशु-पक्षी आदि भी अपने तर्क देते हैं जो यदि हास्यास्पद नहीं तो खिजाने वाले जरूर हैं। मसलन हाथी कहता है, 'यदि मैं इतना ही बेडोल व कुरूप हूं तो फिर गणेश बापा ने मेरा रूप क्यों लिया ?' या धरती कहती है -

'हे मानव! यह गजराज तेरा प्रिय कुटुम्बीजन है
हे मानव! पीपल तेरा पिता है
तुलसी तेरी देवी मां है, मैं तेरी माता।' आदि।

कहानी के अन्त में 'तभी एक आश्चर्य घटा!' हाथ में बांसुरी लिए एक बालक जीतू और बगल में गठरी लिए एक महिला-जीवी मां - दरबार में आते हैं और अपनी बातों से सबकी आंखें खोल देते हैं।

पूरी कथा की परिकल्पना न केवल कहानी कला की दृष्टि से दोषपूर्ण है बल्कि मनुष्य और प्रकृति के अंतर्संबंधों के बारे में लेखक की अवैज्ञानिक और त्रुटिपूर्ण समझ की भी परिचायक है।

यह कहानी मूलतः शायद अंग्रेजी में लिखी गयी थी, क्योंकि अनुवादक के रूप में मंजु महिमा भटनागर और एम.ए.एम.पिलाब का नाम दिया हुआ है। अनुवाद की भाषा ऊबड़खाबड़ है और इसमें अशुद्धियां भी बहुत हैं। वैसे भी, 'तैयार किए बिन्दुओं पर खुली चर्चा' जैसी भाषा बच्चों को नहीं लुभा सकती।

बेहतर है हकु शाह चित्र ही बनाएं और कहानी लिखने का काम कहानीकारों के लिए छोड़ दें।

और अट्टाइस पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य पचास रुपये !

अच्छा होता यदि प्रकाशक इसमें लागत मूल्य और मुनाफे का हिसाब भी बता देते।

गोठ

'गोठ' हकु शाह लिखित एक पुस्तक है जो न कहानी है न लेख न निबंध, बल्कि एक बातचीत है जिसमें संवादों के माध्यम से अलग-अलग जीवों के भोजन और स्वाद पर चर्चा की गई है। प्रसंगवश शाकाहार और मांसाहार की भी बहस है और अंततः यह स्थापित किया गया है कि 'खाना चाहिए शरीर स्वस्थ रखने के लिए' (पृ. 20) तथा 'हम खाने के लिए नहीं जीते, बल्कि जीने के लिए खाते हैं।' (पृ. 29) और 'जितना पचे उतना ही खाना चाहिए।' (पृ. 30)

संभव है ये उपदेश बच्चों के लिए सचमुच उपयोगी और लाभदायक हों, लेकिन पाकशास्त्र की रंग-बिरंगी पुस्तकों का कोई भी लेखक या 'जायके का सफर' जैसे कार्यक्रमों का कोई भी प्रस्तुतकर्ता ऐसी उपदेशात्मक और निषेधवादी पुस्तक देखकर मुंह बिचकाए बगैर नहीं रहेगा।

यह सच है कि हमें किसी के भोजन पर टीका-टिप्पणी नहीं करना चाहिए, क्योंकि हर व्यक्ति का स्वाद और अभिरुचि अलग-अलग हो सकती हैं, लेकिन मुझे लगता है यहां 'षटरस' की विवेचना और जीभ के विभिन्न हिस्सों में स्थित स्वाद ग्रंथियों से पाठकों को परिचित कराने का अवसर गंवा दिया गया।

ऐसी ही एक नजर पारम्परिक भारतीय भोजन में प्रयुक्त तत्वों-यथा मसालों के पोषक गुणों पर भी डाली जा सकती थी। आखिर सैकड़ों सालों के सफल-असफल प्रयोगों के बाद भोज्य पदार्थों का उपयोग स्थिर हुआ है। बल्कि हमारी चिन्ता की बात तो यह होनी चाहिए कि अनेक भोज्य पदार्थों के औषधीय गुणों को हम भूलते जा रहे हैं।

भोजन से स्वाद का निषेध उस तथाकथित 'फिटनेस फ्रीक' की उपज हो सकता है जिसे पूरब की तमाम चीजें बदबूदार और 'अनहाइजिनिक' नजर आती हैं। लेकिन हम जानते हैं कि जायफल से केसर तक और लौंग से पिस्ता तक, हमारे यहां जो भी खाया जाता है उसकी एक 'जीवनवर्धक' भूमिका है। और बेशक, बच्चों को भी यह बात जानना ही चाहिए।

पुस्तक में गोविन्द के रेखांकन सुन्दर हैं।
लेकिन मूल्य पचास रुपये मात्र!!

समीक्षित पुस्तकें -
1. बच्चो! इनसे सीखो हरदम - ले. सच्चिदानन्द सिन्हा
2. जीवी और जीतू - ले. हकु शाह
3. गोठ - ले. हकु शाह
तीनों पुस्तकें वत्सल प्रकाशन, बीकानेर से प्रकाशित। ◆